ISSN 2348-3857

भारतीय लोकतंत्र एवं पुलिस : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

Research Reinforcement
ISSN 2348-3857

डॉ.मुकेश कुमार वर्मा

सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राजस्थान)

शोध सारांश

आधुनिक भारत में कानून एवं व्यवस्था को बनाए रखने के लिए व्यापक स्तर पर पुलिस तंत्र कार्यरत है। यहाँ 'कानून एवं व्यवस्था' शब्द उस स्थिति को दर्शाते हैं जहाँ किसी राज्य में शांति हो, कानून का शासन हो तथा अवैधानिक एवं आपराधिक गतिविधियाँ नियंत्रित हों। इस कार्य को निष्पादित करने का मुख्य दायित्व पुलिस पर है। भारत में स्वतन्त्रता के पश्चात् लोक कल्याणकारी राज्य के स्वरूप को स्वीकार किया गया ताकि लोगों को सामाजिक व राजनीतिक न्याय प्राप्त हो सके। इस लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में लोक कल्याणकारी स्वरुप प्रदान करने में पुलिस की भूमिका को किसी भी तरह नकारा नहीं जा सकता क्योंकि स्वतन्त्रता के पश्चात् से पुलिस को संविधान में दिए गए सिद्धान्तों के अनुपालन से संबद्धित समस्याओं, कानून व्यवस्था बनाए रखने, अपराधों को रोकने तथा प्रजातन्त्र की रक्षा से जुड़ी अनेक व्यवस्थाओं के कार्यान्वयन के लिए पुलिस को हर समय कार्यरत रहना पड़ता है। लोकतंत्र में पुलिस प्रशासन अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हुए सर्वत्र व्याप्त रहता है। वर्तमान में पुलिस का कार्य केवल कानून व्यवस्था बनाए रखना ही नहीं अपितु वे सभी विकासात्मक कार्य करना भी है जिनकी एक लोक कल्याणकारी राज्य के द्धारा अपेक्षा की जाती है। पुलिस के अभाव में लोकतंत्र उस शरीर के समान है जिसमें प्राण नहीं होता। अत: लोकतंत्र में पुलिस प्रशासन लोकतंत्र का प्राण है।

संकेताक्षर : *उपनिवेशवादी विरासत, पुलिस सुधार, लोकतन्त्र का प्राण*

अरस्तू के अनुसार, ''मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है क्योंकि उसकी प्रत्येक आवश्यकता, गतिविधि एवं व्यवहार का सीधा संबंध 'समाज' से होता है यदि कोई मनुष्य ऐसा है जो समाज में नहीं रह सकता हो या जिसे समाज की आवश्यकता नहीं हो क्योंकि वह अपने आप में पूर्ण है तो वह अवश्य ही एक जंगली जानवर या देवता होगा।'' मानव समाज में अराजकता पर नियंत्रण पाने तथा मानवीय व्यवहार को सुस्पष्ट नियमों के अंतर्गत निर्देशित करने हेतु 'राज्य' नामक संस्था का जन्म हुआ है। मानव सभ्यता एवं संस्कृति के क्रमिक विकास के साथ ही विभिन्न सामयिक नियमों, मूल्यों तथा कानूनों का निर्माण हुआ है। स्वीकृत मानदण्डों तथा नियमों का अनुपालन सुनिश्चित करने की दृष्टि से संगठित समाज के लिए अनिवार्य हो जाता है कि एक ऐसी व्यवस्था हो जिसके अंतर्गत नागरिकों के आचरण पर निरन्तर नजर रखी जा सके। प्रारम्भ में स्वयं जनता नियामक रूप में अनुशासन बनाए रखने का कार्य करती थी परन्तु जैसे-जैसे समाज प्रगति के पथ पर आगे बढ़ता गया नागरिकों द्धारा इस कार्यकलाप के लिए समय निकाल पाना कठिन हो गया। परिणामस्वरूप धीरे-धीरे 'पुलिस' नामक संगठन अस्तित्व में आया। आदिकाल से लेकर अद्यतन समाज में कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने हेतु 'पुलिस' या इससे मिलती-जुलती प्रणाली अवश्य विद्यमान रही है ताकि सभ्य समाज द्धारा निर्धारित नियमों, मूल्यों तथा कानूनों को क्रियान्वित किया जा सके और लोक व्यवस्था का संधारण किया जा सके।

सन् 1600 में अंग्रेजों के भारत आगमन तथा प्लासी एवं बक्सर के युद्धों के पश्चात् ईस्ट इण्डिया कम्पनी को बंगाल में प्राप्त हुए दीवानी अधिकारों की क्रियान्विति एवं राजस्व वसूली के लिए जिन आरम्भिक विभागों की स्थापना करनी पड़ी उनमें पुलिस विभाग भी सम्मिलित था।

भारत में पुलिस व्यवस्था को आधुनिक और व्यवस्थित स्वरूप प्रदान करने का श्रेय वारेन हेस्टिंग्स (1772-1785) को जाता है, जिन्होंने पुलिस प्रशासन में सुधार सहित दीवानी और फौजदारी अदालतों का पृथक्करण किया। इसी समय (1781) जिलाधीश

एवं जिला मजिस्ट्रेट नामक पद का सृजन हुआ। सन् 1807 में जमींदारों को पुलिस का सहयोगी बनाने का प्रयास शुरू किया गया। सन् 1808 में कलकत्ता तथा आसपास के जिलों में पुलिस अधीक्षक का पद सृजित हुआ। सन् 1860 में प्रथम पुलिस आयोग का गठन हुआ। इस आयोग की अनुशंसाओं के पश्चात् भारतीय पुलिस अधिनियम, 1861 पारित किया गया।

भारत के संविधान के **अनुच्छेद-13** के अनुसार, ''कानून या विधि शब्द से तात्पर्य अध्यादेश, आदेश, उपविधि, नियम, अधिसूचना, रूढ़ियों तथा प्रथाओं इत्यादि से है।'' ये सभी शासकीय नियम या सामाजिक मान्यताएँ मूलत: व्यक्ति एवं समाज के हित में बनायी जाती हैं। आधुनिक भारत में 'कानून एवं व्यवस्था' को बनाए रखने के लिए व्यापक स्तर पर पुलिस तंत्र कार्यरत है। 'कानून एवं व्यवस्था' उस स्थिति को दर्शाते हैं जहाँ किसी राज्य में शांति हो, कानून का राज हो तथा अवैधानिक एवं आपराधिक गतिविधियाँ नियंत्रित हों। इस कार्य को निष्पादित करने का मुख्य दायित्व पुलिस प्रशासन पर है अत: कानून एवं व्यवस्था तथा पुलिस एक-दूसरे के पर्याय हो गए हैं। भारत में जन सुरक्षा, जेल, न्याय तथा सुधारगृह इत्यादि राज्य सूची के विषय हैं अत: राज्यों के अधीन अपना पुलिस तंत्र कार्यरत है किन्तु आग्नेय एवं विस्फोटक सामग्री, अन्तर्राष्ट्रीय पुलिस, बेतार, केन्द्रीय सतर्कता तथा भारतीय पुलिस सेवा इत्यादि केन्द्र सरकार के अधीन हैं। इस प्रकार राज्य तथा केन्द्र दोनों स्तरों पर आपसी समन्वय तथा सहयोग ही देश के कानूनों के सफल क्रियान्वयन में सहायक बनता है।

पुलिस शब्द की उत्पत्ति के क्रम में कई स्रोत हैं। ग्रीक भाषा के *Politeia* का अर्थ नागरिकता या राज्य या सरकार के प्रशासन से सम्बन्धित रहा है तो लैटिन भाषा के मूल शब्द *Politia* का अर्थ भी राज्य या प्रशासन या सभ्यता से जुड़ा रहा है। इन्हीं से मिलता-जुलता शब्द फ्रेंच भाषा का *Polis* हैं जो नगर का अर्थ देता है। ऐसा माना जाता है कि ग्रीक शब्द *Politeia* से ही कालान्तर में *Polity* (शासन पद्धति), *Policy* (नीति) तथा *Police* शब्द बने हैं। स्पेनिश शब्द *Policia* भी इन्हीं सन्दर्भो में प्रयुक्त हुआ है। अत : पुलिस किसी भी देश का एक शक्तिशाली संगठन है जो समाज विरोधी कार्य करने वाले अपराधियों व संस्थाओं पर नियंत्रण लगाकर सामाजिक व्यवस्था के सुचारू रूप से संचालन में प्रमुख भूमिका अदा करता है। **सदरलैण्ड** ने पुलिस की भूमिका के तीन महत्वपूर्ण पहलू बतलाए हैं। (1) पुलिस राज्य सत्ता के एजेंट व प्रतिनिधि के रूप में कार्य करती है। (2) इसका कार्य कानून तथा व्यवस्था को स्थापित रखना है। (3) पुलिस का कार्य अपराध संहिता को लागू करना है तथा अपराधियों के विरूद्ध कानूनी प्रक्रिया चलाना है।

भारत में स्वतन्त्रता के पश्चात् सामाजिक परिवर्तन की गति तेज हो गई है। स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था के साथ-साथ लोक कल्याणकारी राज्य के स्वरूप को स्वीकार किया गया ताकि लोगों को सामाजिक व राजनीतिक न्याय प्राप्त हो सके। इस स्वरूप के स्वीकार करने के परिणामस्वरूप सरकार के प्रत्येक विभाग के कार्यो में अभूतपूर्व वृद्धि हुई, पुलिस के बढ़े कार्य भी इसी का परिणाम है। इस लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में लोक कल्याणकारी स्वरुप प्रदान करने में पुलिस प्रशासन की भूमिका को किसी भी तरह नकारा नहीं जा सकता क्योंकि पुलिस के अभाव में लोकतंत्र उस शरीर के समान है जिसमें प्राण नहीं होता।

स्वतन्त्रता के पश्चात् से पुलिस को संविधान में दिए गए सिद्धान्तों के अनुपालन से संबद्धित समस्याओं तथा प्रजातन्त्र की रक्षा से जुड़ी अनेक व्यवस्थाओं के कार्यान्वयन के लिए हर समय व्यस्त तथा कार्यरत रहना पड़ता है। कानून व्यवस्था बनाए रखने, अपराधों को रोकने एवं उनकी जाँच करने, साम्प्रदायिक दंगे, भाषा के नाम पर क्षेत्रवाद, बेरोजगार, औद्योगिक अशांति, आन्तरिक असुरक्षा, बढ़ती महंगाई, आतंकवाद, नागरिक सुविधाओं की कमी, अग्निकाण्ड, भूकम्प, चक्रवात, महामारी निम्न व कमजोर वर्गो के लोगों के ऊपर अत्याचार आदि ऐसी अनेक समस्याएँ हैं जिनसे समाज में अराजकता और विद्रोह की स्थिति, अशांति एवं अव्यवस्था का वातावरण चारों ओर दिखलायी देता है इन सभी समस्याओं के कारण लोकतंत्र में पुलिस का कार्यभार बढ़ता गया है। लोकतंत्र में पुलिस प्रशासन अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हुए सर्वत्र व्याप्त रहता है। समाज की बिगड़ती हुई दशा को पुलिस ही सही रूप प्रदान करती है, समाज के प्रत्येक व्यक्ति की सुरक्षा, उनके धन-संपत्ति की सुरक्षा, उनके धर्म की सुरक्षा, उनके प्रत्येक कार्यो में सहयोग देना, समाज में फैली हुई बुराईयों का उन्मूलन करना, संक्रामक रोगों से लोगों की रक्षा करना जैसे कार्य पुलिस द्वारा ही सम्पन्न किए जाते हैं। इस प्रकार पुलिस की लोकतंत्र में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

लोकतंत्र का अस्तित्व जनता के सार्वजनिक हितों की रक्षा के लिए होता है, इस सन्दर्भ में लोकतंत्र पुलिस प्रशासन की भूमिका को निश्चय ही महत्वपूर्ण बना देता है क्योंकि ऊँची-ऊँची अट्टालिकाओं से लेकर झोपड़ी के व्यक्तियों की समस्याओं में पुलिस समान रूप से क्रियाशील होती है। हाट, मेला, प्रदर्शनी, जुलूस यहाँ तक कि धार्मिक कार्यक्रम तक सम्पन्न कराने में पुलिस

ISSN 2348-3857

प्रशासन की अहम् भूमिका होती है। पुलिस के सहयोग बिना कोई भी कार्य कहीं भी सम्पन्न नहीं हो पाता है। भारत में समयानुसार ऋतु परिवर्तन होते रहते हैं फिर भी प्राकृतिक आपदाओं - बाढ़, भूकम्प, सूखा, महामारी जैसी प्राकृतिक विपत्तियाँ तो आती रहती हैं। इन परिस्थितियों में भी पुलिस प्रशासन की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। अत: लोकतंत्र के प्रत्येक क्षेत्र में इनकी परम आवश्यकता होती है चाहे वह फिर साधना का क्षेत्र हो, युद्ध का क्षेत्र हो, उद्यम का क्षेत्र हो, निर्माण का क्षेत्र हो या सुख-सुविधा का क्षेत्र हो।

वर्तमान में पुलिस का कार्य केवल कानून व्यवस्था बनाए रखना ही नहीं अपितु वे सभी विकासात्मक कार्य करना भी है जिनकी एक लोक कल्याणकारी राज्य के द्धारा अपेक्षा की जाती है। परन्तु वर्तमान में ऐसा आभास हो रहा है कि स्वतंत्र भारत के विकासोन्मुख परिदृश्य में पुलिस लोकतांत्रिक एवं निष्पक्ष छवि को पूर्णतया नहीं गढ़ पायी है क्योंकि सामान्यत: भारतीय प्रशासन को ब्रिटिश शासन की विरासत माना जाता है। ऐसे में पुलिस-व्यवस्था पर अंग्रेजी शासन की छाप होना स्वाभाविक है जो कि ब्रिटिश शासकों के साम्राज्यवादी हितों के अनुरूप थी। अत: वर्तमान में लोकतांत्रिक विशेषताओं को पुलिस व्यवस्था में ढूँढने से आभास होता है कि इन विशेषताओं का पुलिस व्यवस्था में अभाव है।

समाज बदलता और विकसित होता रहता है। इससे यह अनिवार्य हो जाता है कि शासकीय ढाँचे के साथ ही पुलिस संगठन में भी बदलाव लाया जाए। इसलिए शासन प्रणाली के ढाँचे में बदलाव अनिवार्य रूप से देश की पुलिस संरचना के आमूल बदलाव के रूप में सामने आएगा। सामाजिक प्रवृत्ति, विकास, तकनीक, पब्लिक व्यवस्था की समस्याओं के बदलते प्रतिरूप और अपराध ऐसे अन्य कारक हैं, जो पुलिस के सेटअप, इसका संचालन करने वाले कानून, इसके कार्य करने का तरीका, व्यवहार, अभिविन्यास आदि मे बदलाव लाने पर जोर देते हैं। यहीं पर पुलिस आयोग और कमेटियों की भूमिका काम में आती है। पुलिस संरचना को बदलने, व्यवस्था, विशिष्ट विभागों की स्थापना करने, कार्य करने के तरीके और पुलिस सुधार से संबंधित कानूनों के अधिनियमन में वे अहम् भूमिका निभाते है।

भारत की एक समृद्ध ऐतिहासिक विरासत रही है। भारत ने आर्थिक उद्भव और विकास के कठिन मार्ग को चुना है, मगर कुछ हद तक इस दौरान भारत ने अपनी आतंरिक सुरक्षा को नजरअंदाज किया है, जो कि न केवल इसके विकास के लिए घातक है, बल्कि राष्ट्रवाद की अभिव्यक्ति, समन्वित सांस्कृतिक, भाषाई, धार्मिक विरासत के अस्तित्व के लिए भी घातक है। भारत की इस भूल का प्रतिबिंब इस राष्ट्र में लगातार आतंकवादी, नक्सलवादी और आंतरिक विरोधों से उठने वाली समस्याओं से है। इसके अतिरिक्त भारत में सभी समुदायों का राजनीतिकरण साथ ही साथ कृषि अर्थव्यवस्था का औद्योगिक अर्थव्यवस्था में संक्रमण के आलोक में कानून और व्यवस्था का सुदृढ़ीकरण और स्थायित्व राष्ट्रीय सुरक्षा के दृष्टिकोण से अत्यंत आवश्यक है तथा इसके लिए कानून और व्यवस्था के संरक्षक पुलिस बल को दुरूस्त करने की भी आवश्यकता है।

भारत में पुलिस की भूमिका न केवल शांतिपूर्ण सामाजिक अस्तित्व के लिए आवश्यक है, बल्कि अपराध नियंत्रण और अपराध निवारण के माध्यम से नागरिकों और गैर-नागरिकों के बीच मनोवैज्ञानिक सुरक्षा उत्पन्न करने के लिए भी उतनी ही आवश्यक है। भारत में इसकी प्रकृति के अनुकूल और लगातार उत्पन्न हो रही कई अंतर्विरोधी समस्याओं ने परिस्थिति को और भी अधिक जटिल बना दिया है जिसके परिणामस्वरूप पुलिस की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है। बावजूद इसके सुधारों के दृष्टिकोण से पुलिस पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। भारत में एक बड़ी जनसंख्या की मनोवृत्ति पुलिस के संदर्भ में एक भ्रष्ट, अमानवीय और असहयोगी हवलदार के रूप में है और कई लोगों के बीच पुलिस कई अर्थो में राजनीतिज्ञों के नियंत्रण के उपकरण और धनाढ्य वर्ग के हितों के निर्धारक के रूप में तथा गरीब वर्ग के शोषण के उपकरण के रूप में माना जाता है।

राजनीतिक अवसरवादिता और आधिकारिक लालफीताशाही के बीच फंसकर पुलिस में सुधारों की प्रक्रिया को कभी भी पर्याप्त अवसर प्रदान नहीं किया गया। प्रशासनिक सुधार से संबद्ध कई समितियों में पुलिस सुधारों को पर्याप्त स्थान नहीं मिल पाया है। हालांकि पुलिस सुधार पर कुछ समिति व कुछ आयोग जैसे - धर्मवीर कमेटी, मालीमथ कमेटी, सोराबजी कमेटी, रिबेरो कमेटी, पद्मनाभन कमेटी, राष्ट्रीय पुलिस आयोग, राष्ट्रीय सुरक्षा पर मंत्रियों का समूह, अपराधिक न्याय व्यवस्था के सुधार पर कमेटी, निरीक्षण कमेटी, मॉडल पुलिस एक्ट ने कुछ महत्वपूर्ण सुधारों की अनुशंसा की मगर इनकी सुधारों की अनुशंसाएँ उपेक्षा का पात्र बनी हुई हैं। यहाँ तक कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिये गये निर्देशों में निर्दिष्ट संदर्भो ने भी राज्य सरकारों को नई पुलिस नीति बनाने के लिए प्रेरित नहीं किया जो पुलिस को उपनिवेशवादी विरासत से बाहर निकालकर आधुनिक रूप में स्थापित कर सके। विभिन्न आतंकवादी घटनाओं ने इस दिशा में राजनीतिक वर्ग की सुगबुगाहट को पुन: जागृत किया है। घटना के बाद सामान्य लोगों के बीच उत्पन्न आक्रोश ने नए पुलिस सुधारों को लागू करने में

दिलचस्पी प्रारम्भ की है।

सारांशत: समाज के बदलाव और विकास के साथ-साथ यह अनिवार्य है कि पुलिस संगठन में भी बदलाव आता रहे। आयोगों व कमेटियों की सिफारिशों के बाद पुलिस सुधार कमेटियों का गठन किया गया जिनका मत था कि राष्ट्रीय पुलिस आयोग द्वारा अनुशासित स्टेट सिक्यूरिटी कमीशन संवैधानिक सलाह देने वाली और अनुशंसित करने वाली संस्था होनी चाहिए। केन्द्रीय सरकार द्वारा गठित उच्च अधिकारियों के नेतृत्व में पुलिस सुधार पर राष्ट्रीय पुलिस आयोग एवं अन्य आयोग के सदस्यों की निरीक्षण कमेटी बनी जिसके द्वारा यह जांचा गया कि विभिन्न आयोगों की सिफारिशों की अनुपालना की गई अथवा नहीं। विभिन्न पुलिस आयोग और कमेटियों के रिपोर्टस के साथ केन्द्रीय और राज्य सरकारो ने जिस तरह इच्छाशक्ति दिखाई है, मूल रूप से पुलिस सुधार लाने और पुलिस को राजनीतिक और तानाशाही नियंत्रण मुक्त करने की इच्छा स्पष्ट रूप से उनकी रूचि को दर्शाता है। अत: कहा जा सकता है कि लोकतंत्र में पुलिस प्रशासन की भूमिका इतनी महत्वपूर्ण है कि उसकी भूमिका लोकतंत्र के प्रहरी जैसी समझी जानी चाहिए क्योंकि निर्भय समाज लोकतन्त्र का आदर्श माना जाता है और निर्भय समाज की स्थापना शत-प्रतिशत पुलिस विभाग की कर्मठता पर निर्भर करती है अत: लोकतंत्र में पुलिस प्रशासन लोकतंत्र का प्राण है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सुब्रमण्यम,के.एस., पॉलिटिकल वायलेंस एण्ड द पुलिस इन इण्डिया, सेज इण्डिया, नई दिल्ली, 2007
2. कटारिया, एस.के., भारत में पुलिस सुधार, पुलिस विज्ञान, अप्रैल- जून, 2009
3. शर्मा, (श्रीमती) अनुपम, लोकतांत्रिक व्यवस्था एवं पुलिस प्रशासन, पुलिस विज्ञान, जुलाई-सितम्बर, 2009
4. दार्शनिक, ओम प्रकाश, लोकतंत्र में पुलिस सेवा, पुलिस विज्ञान, अप्रैल-जून, 2009
5. उमरानीकर, जयंत, पुलिस रिफॉर्म्स इन इण्डिया, अमेय इंस्पायरिंग बुक्स, पुणे, 2009
6. अलैक्जेण्डर, के., पुलिस रिफॉर्म्स इन इण्डिया : इन एनालिटिकल स्टडी, डीपीएच, नई दिल्ली, 2006
7. अलैक्जेण्डर (सं.), पी.जे., पुलिसिंग इण्डिया इन द न्यू मिलेनियम, अलाइड पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2002
8. दीक्षित, आर.सी., पुलिस : द ह्यूमन फेस, ज्ञान पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2000
9. जोशी, अमिता, महिला और पुलिस, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, नई दिल्ली
10. बाबेल, बसन्तीलाल, पुलिस प्रशासन अन्वेषण तथा मानवाधिकार, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1998
11. बाबेल, बसन्तीलाल, न्यायिक विज्ञान, ईस्टर्न बुक कम्पनी, नई दिल्ली, 1998
12. माथुर, कृष्ण मोहन, इण्टरनल सिक्योरिटी चेलेंज एण्ड पुलिस इन ए डवलपिंग सोसाइटी, आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स, जयपुर, 1989
13. शर्मा, पी.डी,.पुलिस एण्ड पॉलिटिकल ऑर्डर इन इण्डिया, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1996
14. शर्मा, रतन लाल, पुलिस और प्रजातन्त्र, शक्ति प्रिण्टर्स, जयपुर, 1989
15. कटारिया, सुरेन्द्र, मानवाधिकार, सभ्य समाज एवं पुलिस, आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स, जयपुर, 2002
16. कटारिया, सुरेन्द्र, भारतीय पुलिस : व्यवस्था एवं विवशता, आर.बी.एस.ए., पब्लिशर्स, जयपुर, 2006
17. कटारिया, सुरेन्द्र, भारत में पुलिस सुधार : प्रवृत्तियाँ एवँ चुनौतियाँ, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर, 2011